

11 स्कूल की ओर दौड़ते बच्चे और अभिभावक

सुजित सिन्हा

कई गाँवों में, गरीब परिवारों के पास 5 से 15 तक देसी मुर्गे होते हैं। बच्चे जानते हैं कि जब 'कुटुम्ब' उनके घर पर आता है, तो उसके लिए मुर्गा पकाना होता है और अगर अचानक पैसे की जरूरत आ पड़े, तो कुछ मुर्गे बेचे भी जा सकते हैं। लेकिन साल में दो या तीन बार महामारी फैलती है और उसमें कई मुर्गे मर जाते है। हाँ, वे जानते हैं कि कुछ पशु–चिकित्सक हैं, सरकारी भी और प्रायवेट भी। लेकिन 15 मुर्गों के इलाज के लिए कौन आएगा? और फिर वे फीस भी तो बहुत तगड़ी वसूल करते हैं। इसलिए कक्षा 6, 7 और 8 के बच्चों से सवाल किया गया कि आप लोग खुद ही मुर्गों को टीका क्यों नहीं लगाते? वे सन्देह से भर उठे–"हम छोटे बच्चे हैं!," उन्होंने कहा। "हम यह कैसे कर सकते हैं?" फिर एक बच्चे ने कहा, "क्यों नही?" यह शुरुआत थी! 8 गाँवों के लगभग 200 किशोरों ने सीखा कि मुर्गों का टीकाकरण कैसे किया जाता है। वे गाँव के परिवारों में गए और उनसे कहा–"कृपया अपने मुर्गों को सबेरे दड़बों से बाहर मत छोड़िए, हम उनको इंजेक्शन लगाने आएँगे।" और अगली सुबह आश्चर्यचकित ग्रामीणों ने देखा कि पाँच–छह बच्चे



उनके दरवाजे पर आए, उन्होंने मुर्गों को पकड़ा और पूरे आत्मविश्वास के साथ उनको इंजेक्शन लगा दिए। पहले साल तो यह काम बगैर कोई पैसा लिए किया गया, दूसरे साल से उन्होंने दवाई पर होने वाला खर्च वसूलना शुरू कर दिया। मुर्गों की मौतें कम हो गई; तीसरे साल से ग्रामीण स्वेच्छापूर्वक दवा की कीमत और फीस देने लगे। इससे आर्थिक रूप से कमजोर कुछ विद्यार्थियों को थोड़ी–सी आमदनी होने लगी!

इस कोशिश से जो कुछ सवाल पैदा हुए वे ये थे : ये किस नस्ल के मुर्गे हैं? ये ब्रॉयलर मुर्गों से किस तरह अलग होते हैं? ये किस बीमारी की छूत का शिकार होते हैं? वे इस बीमारी को कैसे फैलाते हैं? टीका कैसे काम करता है? इसकी खोज किसने की थी? बकरियों और गायों को होने वाली बीमारियों के बारे में क्या सोचते हैं, जो हमें बुरी तरह प्रभावित करती हैं? क्या हम इन बीमारियों का पता लगाकर उनका इलाज कर सकते हैं? क्या ये चीजें हमारी स्कूल की किताबों में दी गई हैं? स्कूल की किताबें तो ऑस्ट्रेलियाई गायों के बारे में बात करती हैं! क्या सरकारी पशु–चिकित्सक कक्षाएँ ले सकते हैं? बच्चे विकास–खण्ड के पशु–चिकित्सा अधिकारी के पास गए। वह बहुत खुश और उत्साहित हुआ। उसने आकर उनको सिखाया कि बकरियों और गायों की बीमारियों का पता कैसे लगाएँ। फिर बच्चों में एक बकरी–गाय टीकाकरण शिविर आयोजित करने की इच्छा जागी। पशु–चिकित्सा अधिकारी काफी उत्साहित था क्योंकि उसको अपना कोटा पूरा करना था। इसके बाद बच्चों ने मिल–बैठकर परिवारों के सर्वेक्षण की एक रूपरेखा तैयार की : कितनी गायें

और कितनी बकरियाँ? उम्र? नस्ल? क्या आपके पास जमीन है? चारा हासिल करने के स्रोत और उसमें पेश आने वाली मुश्किलें क्या हैं? बीमारियाँ? इत्यादि। इसके बाद वे आँकड़े इकट्ठे करने निकले और उस दौरान उन्होंने काफी मौज–मस्ती भी की। बाद में वे ये आँकड़े लेकर बैठे, उन्होंने तालिकाएँ, रेखाचित्र, पाई चार्ट तैयार किए। गणित उनके लिए मनोरंजन और उपयोगी चीज बन गई! उनको पता था कि कितने घरों में एक गाय है, कितने घरों में 2 से 5 गायें हैं, कितने घरों में 5 से 10 गायें हैं, और कितने ऐसे हैं जिनके पास गायें तो हैं लेकिन जमीन नहीं है, दूध का कितना उत्पादन होता है और पशुओं को किन कीमतों पर बेचा जाता है आदि आदि। बच्चों के पास पूछने के लिए ढेरों सवाल थे! इसके बाद उन्होंने गाय–बकरी पशु–चिकित्सा शिविर का प्रचार और आयोजन किया। इस शिविर को आयोजित करने के सिलसिले में स्कूल, ग्रामीण, पंचायत के सदस्य और विकास–खण्ड के अधिकारी सब लोगों का आपस में मेल–जोल हुआ। यह शिक्षण और मनोरंजन का अच्छा–खासा मेला बन गया।

स्कूली शिक्षा क्या है? हम सब जानते हैं कि शिक्षा–नीति के गजब के दस्तावेजों और सुन्दर तरीके से लिखे गए शिक्षा सम्बन्धी लक्ष्यों के साथ ही कई तरह के उद्यमों के बाद ज्यादातर वयस्कों, अभिभावकों, अध्यापकों और बच्चों के लिए स्कूली शिक्षा का मतलब रोज–रोज एक कमरे के भीतर एक निश्चित जगह पर चार–पाँच घण्टे तक बैठना, पाठ्य–पुस्तक को अध्यापक की मदद से पढ़ने और समझने की कोशिश करना, घर जाकर उसको घोंटना और फिर किसी इम्तिहान में उसको 'उगल देना' होता है। सन्दीप बन्दोपाद्याय 'श्रीनिकेतन' में लिखते हैं : "शिक्षासत्र की स्थापना शान्ति निकेतन के करीब 1 जुलाई 1924 को हुई थी। हर बच्चे को जमीन का एक छोटा–सा टुकड़ा दिया गया था और उसे इस जमीन को खेल का मैदान तथा प्रयोग–स्थल की तरह बरतने के लिए प्रोत्साहित किया गया था। उसको अपनी पसन्द और रुचि के मुताबिक हस्तशिल्प चुनने की छूट भी दी गई थी। हरेक हस्तशिल्प को एक मिशन की तरह और अनौपचारिक शिक्षा के स्रोत की तरह बरता गया। 1928 की रिपोर्ट में साफतौर पर कहा गया था कि हस्तशिल्प का एक 'निश्चित आर्थिक मूल्य' होना चाहिए और जो भी चीजें तैयार की जाएँ वे वास्तविक घरेलू उपयोग की हों और बाहर बेची जाने के लिए एकदम तैयार होनी चाहिए।" इस तरह शिक्षासत्र ने 'कई अर्थों में' गाँधी की 'बुनियादी शिक्षा योजना' की पूर्व कल्पना कर ली थी।

आनन्द निकेतन 1937 में सेवाग्राम में मीराबेन और अन्य लोगों द्वारा शुरू किया गया था। फिर उसे कई वर्षों तक आर्यनायकम्स का मार्गदर्शन प्राप्त हुआ था, जिन्होंने शान्ति निकेतन से वर्धा जाने के पहले कुछ समय तक शिक्षासत्र में काम किया था। इसका बहुत ही सुन्दर वर्णन मार्जोरी साइक्स ने अपनी पुस्तक में करते हुए कहा है कि 'नई तालीम का किस्सा 1960 में समाप्त हो चुका था, उसी तरह जैसे कि देश भर के दूसरे बुनियादी स्कूल या नई तालीम स्कूल बन्द हो चुके थे।' लेकिन तालीमी संघ के समर्थन से साहसी सुषमा शर्मा ने 2005 में एक बार फिर से इसको शुरू किया।

अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय के 2011–13 सत्र की एम.ए. एजुकेशन की एक छात्रा, जो इस स्कूल के साथ काम कर रही थी, का कहना है, "हर बच्चे के पास एक छोटा–सा खेत है और वे अपनी फसलों को रोपते, सँवारते और सींचते हुए जोड़, माप, परिमिति, आकृति, कोण, आँकड़ों का संग्रह और नियोजन, भिन्न, दशमलव,



अनुपात और ऐसी ही तमाम अवधारणाओं के बारे में सीख रहे हैं। ये अवधारणाएँ एन.सी.ई.आर.टी. की कक्षा 5, 6 और 7 की गणित की किताबों में दी गई हैं। सीखने के साथ–साथ वे इस कदर मौज–मस्ती करते हैं कि जिनको सातवीं कक्षा के बाद स्कूल से जाना है वे कहते हैं कि काश वे इस स्कूल में बने रह पाते।" खेद की बात है कि आनन्द निकेतन को सरकार की मंजूरी नहीं मिली है क्योंकि महाराष्ट्र मराठी माध्यम के नए स्कूलों को मान्यता नहीं दे रहा है और फिर यह स्कूल सिर्फ सातवीं कक्षा तक ही है। इस तरह, जहाँ टैगोर और गाँधी के सपनों का वजूद खतरे में है, वहीं, इस बीच, कुछ बच्चे हैं जो 'कर्म और शिक्षा' को एक–दूसरे से जोड़ने का आनन्द ले रहे हैं।

लेकिन रुकिए – क्या सिर्फ बच्चे ही मौज–मस्ती करते रहेंगे? और उनके अभिभावक? पश्चिम बंगाल के उत्तरी चौबीस परगना जिले में 4 प्रयोगशील स्कूलों के साथ सक्रिय गैर सरकारी संस्था *स्वनिर्भर* ने मई–जून 2002 में अभिभावकों के साथ कुछ अभ्यास करने का फैसला किया। उसी गाँव के अभिभावकों (ज्यादातर माताओं) को एक साथ बिठाकर उनको उनके गाँव का एक नक्शा बनाने के लिए प्रोत्साहित किया गया। कुछ मामलों में स्वनिर्भर अध्यापकों ने इस प्रक्रिया को जारी रखते हुए हरेक से कहा कि वे नक्शे में सबसे पहले अपने घर से स्कूल तक जाने वाली सड़क उकेरें। हर बार अभिभावकों ने पूरी तल्लीनता के साथ तमाम सड़कों, बड़े–बड़े पेड़ों, व्यापक रूप से इस्तेमाल में लाए जाने वाले ट्यूबवैलों, महत्वपूर्ण दुकानों, स्कूलों, पूजा–स्थलों को, यहाँ तक कि घरों (विशेष रूप से अपने घरों) को नक्शे में उकेरना शुरू कर दिया! दूसरा अभ्यास था टाइमलाइन तैयार करने का। यह क्या चीज है इसे दर्शाने के लिए *स्वनिर्भर* अध्यापकों ने भागीदारी कर रहे एक व्यक्ति की टाइमलाइन की मार्फत उसकी जिन्दगी का विवरण पेश करने में मदद की और फिर अभिभावकों को कई सारी टाइमलाइन तैयार करने के लिए समूहों में बाँट दिया। इस अभ्यास के अगले दिन कई माँओं ने, जो पिछले दिन नहीं आईं थीं या नहीं आ सकीं थीं, शिक्षकों के पास जाकर शिकायत की कि उनको इस खेल से वंचित क्यों रखा गया। सालों से काम करते हुए आज *स्वनिर्भर* इन कार्यशालाओं में साक्षर और निरक्षर दोनों तरह के अभिभावकों (जिनमें पिता भी शामिल होते हैं) को हिस्सेदार बनाने में पर्याप्त सक्षम हो चुका है। इसलिए, अब अभिभावक बच्चों के साथ *स्वनिर्भर* द्वारा की जाने वाली चीजों की अहमियत को समझने लगे हैं, भले ही ये चीजें उनकी पाठ्य–पुस्तकों का हिस्सा नहीं हैं। इसलिए अब ऐसे अभिभावक हैं जो *स्वनिर्भर* के लिए कई तरह की शिक्षण सामग्रियाँ तैयार करते हैं (और कुछ अतिरिक्त मात्रा में भी तैयार करते हैं, जिनको वे घर ले जाते हैं) ; फिर ऐसे सयाने लोग भी हैं जो "नई" माँओं को मार्गदर्शन देते हैं। अब अभिभावक कार्यशाला का इन्तजार करने लगे हैं जो अब पहली और दूसरी कक्षाओं के विद्यार्थियों के अभिभावकों के लिए तथा तीसरी से पाँचवीं कक्षा के अभिभावकों के लिए अलग–अलग आयोजित की जाती हैं।

इन "वैकल्पिक" स्कूलों द्वारा हर कहीं ऐसी बहुत–सी दिलचस्प चीजें आजमाई गई हैं और उनकी कोशिशें जारी हैं। गुसलखानों का सर्वेक्षण, पानी का सर्वेक्षण, पेड़ों का सर्वेक्षण और उनका विश्लेषण तथा उसके बाद की कुछ कार्रवाइयाँ जैसी बातें दिलचस्प और उपयोगिता की दृष्टि से रचनात्मक हैं। वे बच्चे के सर्वांगीण विकास में, उसकी संवेदनशीलता तथा जनतांत्रिक प्रवृत्तियों आदि को बढ़ाने में सहायक हैं। क्या देश के लाखों ग्रामीण बच्चों को इस तरीके से सीखने का और इस शिक्षा के माध्यम से ग्रामीण भारत को रूपान्तरित कर देने का अवसर मिल सकेगा?

एनसीएफ–2005 इस विचार के प्रति सहानुभूतिशील है। कई राज्य सरकारें शायद इसकी कोशिश करना चाहें। इस काम को आगे बढ़ाने में कइयों को मिल–जुलकर आगे आना होगा। दिगन्तर की "अपने आसपास" और उत्तराखण्ड सेवा निधि की "अवर लैण्ड अवर लाइफ" जैसी अलग तरह की पुस्तकों का लिखा जाना जरूरी होगा। हर इलाके को अपने क्षेत्र की विशिष्ट और उपयुक्त गतिविधियों तथा उनको करने के तरीकों के साथ सामने आना होगा। उदाहरण

के तौर पर मैं सेकमोल, लद्दाख के सोनम वांगचुक को उद्धरित करना चाहूँगा : “कभी–कभी स्कूल अपने को बन्द करके ही शिक्षा में योगदान कर सकते हैं। मसलन, स्कूल गरमी के सत्र में खुले रहते हैं, तब ऐसा बहुत कुछ होता है जो बच्चे खेतों में जाकर सीख सकते हैं। अगर आप चाहते हैं कि बच्चे कृषि के बारे में सीखें, तो इसका तरीका यह नहीं है कि आप उनके लिए कृषि की कक्षाएँ शुरू कर दें, बल्कि सिर्फ इतना करें कि गर्मी के एक महीने स्कूल बन्द रखें जब खेतों में इतना कुछ होता है कि बच्चे वहाँ जाकर वह सब सीख सकते हैं।”



सुजित *इन दिनों अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय,बंगलौर में पढ़ाते हैं। उन्होंने 20 साल से भी ज्यादा समय तक पश्चिम बंगाल की गैरसरकारी संस्था (स्वनिर्भर) के साथ काम किया है। यह संस्था शिक्षा, स्वास्थ्य, टिकाऊ खेती, स्वयंसेवी समूहों और आदर्श पंचायत के निर्माण जैसी गतिविधियों में सक्रिय रही है। सुजित की प्राथमिक दिलचस्पी टैगोर और गाँधी के शिक्षा सम्बन्धी विचारों की इस तरह व्याख्या करने में है ताकि वर्तमान और भविष्य के सन्दर्भ में उनकी प्रासंगिकता सामने आ सके। उनसे sujit.sinha@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।* ***अनुवादः*** *मदन सोनी*